International Research Journal ISSN-0975-3486 RNI : RAJBIL 01488 VOL. I * ISSUE—3

शोध पत्र- दर्शन विभाग

Dec.-09—Jan.-2010

नानक का समाज दर्शन

* राकेश सोनी

*व्याख्याता, दर्शन विभाग, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक (म.प्र.)

गुरूनानक देव अपने समय के क्रांतिकारी दृष्टा थे। भारतीय समाज जहॉ एक ओर अज्ञानता, अशिक्षा, धार्मिक अंधविश्वास और जातिवाद की समस्या से जूझ रहा था तो दूसरी ओर मुस्लिम आक्रांतों की हिंसा भी आक्रांत किये हुये था। ऐसी स्थिति में एक ऐसे सामाजिक चिन्तक की आवश्यकता थी जो समाज के लोगों को निराशा, हताशा और दुःख से उबार सके। स्वाभिमान और पौरूष की भावना से ओतप्रोत करके उसे नागरिक दृढ़ता प्रदान कर सके। नानक ने अपने विचारों और आचरण से लोगों के भीतर एक ऐसी ऊर्जा को प्रवाहित करने में सफल रहे है, जिससे कि एक अलग ही सिक्ख धर्म की उत्पत्ति हो गयी। प्रस्तुत शोध आलेख में नानक के सामाजिक धारणाओं और विचारों का सिंहावलोकन किया गया है और यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि उनके विचार अपने समय में क्रांतिकारी भूमिका अदा की थी।

गुरूनानक के समाज दर्शन का मूल सिद्धान्त यह है कि संसार की सभी जातियॉ एवं मनुष्य मानवता के धरातल पर एक समान है। प्रत्येक का जन्म सिद्ध अधिकार है कि वह अत्याचार, भय, सामाजिक एवं राजनैतिक पराधीनता के अत्याचारों से मुक्त रहे। किशोरावस्था में ही गुरूनानक ने जांत–पांत के भेदभाव पैदा करने वाले जनेऊ आदि पहने की रस्मों के विरूद्ध विद्रोह कर दिया था क्योंकि ये रस्में अमीर तथा पंडित पुरोहित श्रेणियों कि समाज में ऊंचा स्थान देकर तथा मजदूर श्रेणियों को नीच कुल को सिद्ध करके इसमें सदैव के लिये ऊंच नीच का भेदभाव पैदा कर देती थी। गुरूनानक ने न केवल ऊंच नीच जातियों के बीच खड़ी छुआछूत की घृणित दीवारों को गिराकर दूर फेंक दिया, अपितु हिन्दुओं तथा मुसलमानों के बीच एक दूसरे को काफिर तथा मलेच्छ समझने का सांस्कृतिक अंतर भी मिटा दिया। हिन्दू धर्म के चार वर्ण, चार आश्रम के मूल सिद्धान्त का खण्डन करके इस परम्परा को समूचे समाज तथा सभ्यता के लिये हानिकारक बताया है और इसके मूलोच्छेदन का प्रयास किया।[1] ऊंच–नीच तथा छुआछूत के बने हुये तथा बनाये गये सिद्धान्तों की अत्यन्त कटु आलोचना करके, इन्हें आत्यन्त खतरनाक वहम बताया।[2]

यह गुरूनानक के सर्व सहयोगी धर्म का ही चमत्कार था कि भारतीय इतिहास में प्रथम बार सभी धर्मो के, सभी जातियों, के सभी श्रेणियों के लोग, क्या अमीर, क्या गरीब, क्या स्त्री क्या पुरूष बिना किसी भेदभाव के एक संगत में बैठकर लंगर खा सकते थे।[3] गुरूनानक ने संसार के लिये जिस सामाजिक विधान को निर्धारित करने का प्रयास किया उसमें उन्होंने भिन्न–भिन्न राष्ट्रों, जातियों तथा धर्मों में सद्भावना, प्रेम तथा एकता पैदा करने का प्रयत्न किया। गुरूनानक के सिद्धान्तानुसार चित्रित समाज एक यथार्थवादी तथा सत्यता पर निर्भर समाज है। इस समाज में गुरूनानक ने दंभियों को पाखण्डियों तथा लोगों के बनाये गये ब्रह्मों, भ्रमों तथा हानिकारक रीति रिवाजों के लिए कोई स्थान नहीं रखा सत्य से प्रकाषित बुद्धि को, अज्ञानता रूपी अंधकार दूर करने वाला दीपक बताया और इस ज्ञानरूपी दीपक को सदैव के लिये जगमगाये रखने का मुक्ति भी बतायी।[4]

गुरूनानक ने समाज को प्रकाशित आत्मा तथा ज्ञानोदीप्ति मानववाद दिया। उन्होंने गुरूद्वारों के तथा अपने द्वारा स्थापित हरि मंदिरों के द्वारा चारों ओर से, सभी राष्ट्रों, धर्मों तथा जातियों के लिये खोल दिये तथा स्त्रियों को पूजा, अर्चना, उपासना तथा समाज में पुरुषों के बराबर आजादी के अधिकार दिये। सोलहवीं शताब्दीं में गुरूनानक ने सिक्ख समाज में स्त्री जाति को इतने अधिकार दिये जो आज से पचास वर्ष पूर्व के योरोपीय समाज को स्त्रियों को प्राप्त नहीं थे।[5] गुरूनानक के धर्म की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह निवृत्तिमूलक

नहीं है, प्रवृत्तिमूलक है। उन्होंने पाखण्डों एवं बाह्याडम्बरों का खण्डन किया है, चाहे वह हिन्दू हो, ब्राह्मणों का हो, चाहे जैनों का हो, चाहे योगियों का हो, चाहे मुल्लाओं अथवा काजियों का हो। धर्म के वास्तविक स्वरूप को त्यागकर लोग बाह्याडम्बरों के पीछे बुरी तरह से पड़ जाते हैं। ये ही बाह्याडम्बर लड़ाई–झगड़े और असहिष्णुता के कारण बन जाते है।[6] उन्होंने अपने उपदेषों में सामाजिक कुरीतियों का बुरी तरह खण्डन किया है। जातिगत प्रथा समाज की सबसे बड़ी कमजोरी है। इससे सारा समाज विश्रृंखल हो जाता है। गुरूनानक ने इस कमजोरी को अनुभव करके ही कहा था – जाणहु जोति न पूछहु जासी आगे जाति न हे।

तात्पर्य यह है कि परमात्मा की ज्योति ही समस्त प्राणियों में समझो। अतएव जाति सम्बन्धी प्रश्न मत करो, क्योंकि पहले किसी प्रकार की जाति व्यवस्था नहीं थी।[7] इसी प्रकार उन्होंने हिन्दू जाति की उपेक्षित नारी समाज को फिर से प्रतिष्ठा के आसन पर बैठाया। उन्होंने आशा की बार में स्त्रियों के सम्बन्ध में ऊंचे विचार प्रकट किये हैं। गुरूनानक देव ने स्त्रियों के खोये हुये अधिकारों को वापिस दिया। आध्यात्मिक साधनाओं और जीवन के अन्य क्षेत्रों में उसकी समानता पुरूषों से स्वीकार की गयी। उन्होंने धर्म के बाह्यरूपों में परिस्थितियों के अनुकूल परिवर्तन किये। उन्होंने भक्ति मार्ग को उसके दोषों से बचाया। भक्ति मार्ग के प्रधानतया तीन दोष है, पहला दोष यह है कि इष्टदेव के नाम भेद के कारण पारस्परिक झगड़े हो जाया करते है। दूसरा दोष यह कि अंध श्रद्धा के कारण लोग प्रायः इष्टदेवों की मर्जी पर इतने अधिक निर्भर हो जाते है कि व्यवहार में भी स्वावलम्बी बनना छोड़ कर एकदम आलसी और निकम्मे से ही रहते है तथा अपनी कमजोरियों और आपत्तियों का दोष अपने इष्टदेव के ऊपर छोडकर चुप हो जाया करते हैं। तीसरा दोष यह है कि लोग दंभियों के चक्कर में पड़कर दुःख भी उठाते हैं। गुरूनानक देव ने भक्ति के उपर्युक्त तीन दोषों को अत्यन्त सतर्कता से दूर किया।[8] पहले दोष को मिटाने के लिये उन्होंने यह उपाय किया कि परमात्मा को रूप और आकार की सीमा से परे माना है। उन्होंने ऐसे इष्टदेव की कल्पना की जो अकाल मूर्ति अजूनी (अयोनि, अजन्मां) तथा खैभं (स्वयंभू) है। दूसरे दोष को मिटाने के लिये गुरूनानक देव ने निवृत्ति मार्ग को त्याग कर प्रवृत्तिमार्ग को ग्रहण किया। तभी तो बाबर के आक्रमण की भयंकरता को देखकर और करूणा से विचलित होकर कर्ता से नानक देव प्रश्न करते हैं– एती मार पईं तैं की दरदु न आइजा। अर्थात् ऐ! कर्ता पुरूष भारत वर्ष पर इतनी मार पड़ी, पर तुम्हारा हृदय जरा भी द्रवीभूत नहीं हुआ। इसीलिये उन्होने अपने मोक्ष तथा लोक कल्याण के निमित्त सेवा धर्म पर जोर दिया है। गुरूनानक का प्रेम मौखिक न होकर सेवा भावना से ओतप्रोत है। जिस प्रेम में सेवा भावना नहीं होगी वह वास्तविक प्रेम न होकर सहानुभूति मात्र रह जायेगा। तीसरे दोश के परिहार के लिये उन्होंने बाह्याडम्बरों के त्याग और प्रेम भक्ति पर अधिक बल दिया।

उन्होंने जनता की निराषा को दूर कर उनमें आशा, विश्वास और पौरुष की भावना जाग्रत की। इस प्रकार की शिक्षा का गुरू नानक देव ने खण्डन किया कि मनुष्य पापी है और उसका इस जगत में रहना अपराध और पाप है। उन्होंने निराशा में यह अमरत्व भावना भरी कि उसका शरीर परमात्मा के रहने का पवित्र स्थान है। इसीलिये इसे कष्ट देने की अपेक्षा परमात्मा की अनुपम देन समझकर उपयुक्त ढंग से रखना चाहिये। पर इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि उन्होंने शरीर को सब कुछ समझ लेने को कहा। इस सम्बन्ध में उनकी शिक्षा गीता के निम्नलिखित श्लोक के समान है–

युक्ताहार विहारस्ययुक्त चेष्टस्य कर्मतु।
युक्त स्वप्नाकबोधस्य योगों भवति दुःखहा।।

यह दुःखों का नाश करने वाला योग तो यथायोग आहार और विहार करने वाले का तथा कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करने वाले की योग्यता, चेष्टा करने का यथायोग्य शयन करने वाले का तथा जागने वाले का सिद्ध होता है। गुरूनानक की इन्हीं शिक्षाओं का प्रभाव थ कि उनके अनुयायियों ने राष्ट्रनिर्माण और राष्ट्र सेवा में अनुपम योग दिया। उनके अनुयायीं सिक्ख अपने 'आपा' को खोकर मानवता की सेवा के माध्यम द्वारा परमात्म चिंतन में प्रवष्त्त हुये।[9] गुरूनानक देव ने हिन्दू और मुसलमान दोनों ही धर्मों के बीच समन्वय स्थापित करने की चेष्टा की। इसीलिये उन्होंने जहाँ एक ओर सच्चा मुसलमान बनने की विधि बतायी। वहीं दूसरी ओर यह भी बताया कि सच्चा ब्राह्मण कौन है। उन्होंने यह भी बताया कि ब्राह्मणों का जनेऊ किस प्रकार का होना चाहिये जो ब्राह्मण जनेऊ धारण करता और असंतोष की आग में जल रहा है वह ब्राह्मण नहीं है। सत्य यज्ञोपवीत की गांठ है और सत्य ही उसकी पूरन है जो ऐसे यज्ञोपवीत को धारण करता है, वही सच्चा जनेऊ पहनता है।

गुरूनानक का धर्म सृजनात्मक प्रवृत्तियों से ओतप्रोत है। उन्होंने इस बात को स्पष्ट कर दिया है कि जो व्यक्ति हिन्दू–मुसलमान दोनों धर्मों को एक समझता है, वही मर्मज्ञ है। उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानों की निंदा इसलिये नहीं की कि वे धर्म बुरे थे, बल्कि उनकी निन्दा इसलिये की कि वास्तविक मार्ग को भूलकर गलत रास्ते पर जा रहे थे।

उन्होंने क्षुब्ध होकर दोनों प्रकार की क्रूरताओं की तीव्र आलोचना की। वे कहते है कि प्राणी भक्षक मुसलमान नमाज पढ़ते है और जुल्म की छुरी चलाने वाले हिन्दू जनेऊ धारण करते हैं। गुरूनानक देव के धर्म में सभी धर्मों के प्रबल व्यावहारिक पक्ष अत्यन्त उदारता से संग्रहीत है। वैष्णव धर्म की सेवा भावना सिक्ख धर्म में समा गयी है। कबीर की जातिप्रथा संबंधी क्रांतिकारी विचारों को भी गुरूनानक देव ने अपने अनुयायियों में प्रचारित किये है।

अब नानक के समाज दर्शन के उन तथ्यों पर विचार करें जिनके कारण सिक्ख धर्म नये धर्म के रूप में जाना जाता है। नानक के समाज दर्षन का व्यापक प्रचार प्रसार उनके गुरू परंपरा के गुरू अंगद देव, गुरू अमरदास, गुरू रामदास, गुरू अर्जुनदेव व गुरू तेगबहादुर एवं गुरू गोविन्द सिंह आदि के माध्यम से हुआ। सिक्ख धर्म प्रारंभ से ही सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों रहा है। गुरूनानक ने स्वयं एक पारिवारिक जीवन व्यतीत किया था। उन्होंने आरंभ से ही चरित्र बल के निर्माण की ओर अधिक ध्यान दिया। सिक्ख धर्म में गर्भाधान, पुंसवन, सीमंतोन्नयन संस्कार नहीं होते हैं। लेकिन तप करके, ईश्वर से प्रार्थना करके संतान को प्राप्त करने को कहा गया है। जातकर्म संस्कार नहीं होता है। इसके स्थान पर पवित्री नामक संस्कार होता है। संतान को जन्म देने के बाद स्त्री को शुद्ध होने में चालिस दिन लगते हैं। पुत्र को अमृत पान कराते हैं। इसकी विधि इस प्रकार है। श्री गुरूग्रन्थ साहिब में जपुजी के पाठ करके, अभिमंत्रित करके जल के पांच छीटे देकर मॉ तथा बच्चे को पिलाया जाता है। इसे अमृत पान या पवित्री कहा जाता है। इस समय जपुजी का पूरा पाठ किया जाता है।

सिक्ख धर्म में नामकरण संस्कार की विधि अलग है। मॉ के स्वस्थ्य हो जाने पर गुरु द्वारा नामकरण संस्कार कराया जाता है। श्रीगुरूग्रन्थ साहिब से हुकुमनामा लिया जाता है। उसमें जो आये उसके पहले अक्षर से बच्चे का नाम रखा जाता है। उसे गुरू गोविंदसिंह जी द्वारा प्रारंभ हुआ माना जाता है। निष्क्रमण, अन्नप्राशन संस्कार की विधि स्पष्ट नहीं बतलायी गयी है। इतना जरूर है कि सिक्ख धर्म में बच्चे के पैदा होने के चालीस दिन के भीतर ही पांच अमष्त धारी सिक्ख उसीघर में बैठकर प्रसाद तैयार करके 108 कवयोवाच वेनती चौपाई पादषाही 10 हमरी करो हाथ दे कछा पूरन हुये चित की इच्छा के 108 पाठ करते हैं जिसमें आजीवन उस संतान को कोई बाहरी भूत प्रेतादि की बाधा नहीं होती है। ऐसा विष्वास किया जाता है कि पहले यह सभी सिक्खों में प्रचलित थी लेकिन अब नामधारी सिक्खों में यह प्रथा चालू है।

चूड़ासंस्कार :— सिक्ख धर्म में श्रृंगार वर्जित है। ऐसा माना जाता है कि जो श्रृंगार करते हैं उनकी काम से मित्रता है। नारीयों को भी श्रृंगार वर्जित है। कर्णबेध संस्कार नहीं होता है। गुरूनानक देव जी का हुकुम है कि शरीर का छेदन —भेदन नहीं करना— 'साबत सूरत दस्तार सिरा' अर्थात अकाल पुरूष ने जैसा साबित शरीर दिया है उसी को आजीवन ज्यों का त्यों रचना। सिर पर दस्तार बांधे रखना चाहिये। विघाटंभ व उपनयन संस्कार अमृत पान संस्कार के रूप में विद्यमान है। गुरूनानक जी ने चरण पाडुल दीक्षा विधि प्रारंभ की थी और इसे गुरू गोविन्द सिंह जी ने समाप्त करके खण्डे की पाहुल प्रथा घना दिया। खण्डे की पाहुल लेने वाला पांच ककारों की धारणी होनी चाहिये—केश, कंध, कड़, कृपाण और कच्छा। दीक्षित सिक्ख को आजीवन पॉच वाणियों का पाठ और नाम सुमिरन अनिवार्य धर्म—कर्म है। इसी आधार पर श्री गुरू गोविन्द सिंह जी का हुकुम है कि जिसे गुरू से बात करनी है वह गुरूग्रन्थ साहिब जी का पाठ करें। समावर्तन संस्कार नहीं है। इसे इस अर्थ में ग्रहण किया जाता है। सिक्ख को आदेश है कि श्रम से प्राप्त आजीविका में से दसवां अंश गुरू सेवा में अर्पित करें। विवाह संस्कार सिक्ख धर्म का महत्वपूर्ण संस्कार है। विवाह के लिये मुहुर्त या तिथि नहीं मानते हैं। नानक का वचन है तिथि, वार सब हर किये, सभी तिथि व दिन ईश्वर के हैं अतः जब चाहे तभी व्यक्ति विवाह कर सकता है। वर पक्ष की बारात वधु पक्ष के घर जाती है। घर जिसमें मंगलमयी गुरूवाणी के पद गाये जाते हैं और उसके बाद अरदास (प्रार्थना) की जाती है कि ईश्वर ऐसी कृपा कीजिये ताकि दोनों पक्षों का आपस में परस्पर प्रेम बना रहे। उसके बाद वर वधु को श्रीगुरूग्रंथ साहिब के सम्मुख बैठाया जाता है और साथ में मंगलमयी गुरूवाणी का कीर्तन होता है। उसके बाद अरदास करके गुरूमत विधि के आधार पर आनंद कारज अर्थात् विवाह संस्कार प्रारंभ किया जाता है। वर—वधु गुरूग्रन्थ साहिब के चारपदों के आधार पर इसी पवित्र ग्रंथ की चार परिक्रमा करते हैं। हर पहल डी नाम प्रवृत्ति करम दृढ़ाया बलराम जियो श्रीगुरूग्रंथ साहिब पष् 77—3—774 वे अन्य चार पदों का पाठ करते हैं। इसके बाद आनंद साहिब पढ़कर अरदास कर इस कार्य को सम्पन्न किया जाता है।

अन्त्येष्टि संस्कार सिक्ख धर्म में मान्य है। प्राणी के स्वर्गवास या कालवास हो जाने पर आदेश है कि कोई रोये नहीं। मृतक के शव के पास गुरूवाणी का पाठ किया जाता है। जब मृतक को दाह संस्कार के लिये जाते हैं तो उसे स्नान करवा के पूरे वस्त्र पहना कर पंच ककार से शोभित कर अंतिम यात्रा प्रारंभ की जाती है। वहॉ भी वैराग्यमयी वाणी का

कीर्तन करते हुये चिता या अंगीठा तैयार की जाती है। उस पर मृतक का शव रखकर अरदास करके अग्नि संस्कार किया जाता है। चिता में अग्नि पकड़ने पर सोलह वाणी का पाठ किया जाता है। इस संस्कार को सम्पन्न करने में प्रायः पुत्र को प्राथमिकता दी जाती है। जहॉ पुत्र नहीं होता है वहॉ कोई भी स्नेही व्यक्ति दाह संस्कार कर सकता है। तिलांजलि या पिंडदान नहीं किया जाता है। मृतक अशौच नहीं माना जाता है। शमशान के लोग गुरूद्वारा आते हैं और वहॉ अरदास करके आनंद साहिब और अलड़ियों का पाठ करते हैं। स्नान न करना कोई भेदभाव नहीं मानते हैं। कड़ा प्रसाद अरदास करके बांट दिया जाता है जब चिता शांत हो जाती है तब कहीं भी राख और अस्थियों को जल में विसर्जन कर दिया जाता है। अब ऐसी मान्यता चालू हो रही है। कुछ सिक्ख आनंदपुर के पास कीरतपुर साहिब में जो पातालपुरी नामक गुरूद्वारा है वहॉ जाकर चरण गंगा नाम की नदी में भस्मी और अस्थियों को विसर्जित करने लगे हैं, उस दिन से गुरूग्रन्थ साहिब का पाठ करके दसवें दिन अंतिम अरदास सम्पन्न की जाती है। इसके बाद मृतक का कोई क्रिया कार्म नहीं किया जाता है। ये ऐसे बाह्य प्रतीक हैं जिनके कारण सिक्ख धर्म विशाल हिन्दू धर्म से अलग प्रतीत होने लगा है लेकिन इससे यह स्पष्ट है कि सिक्ख धर्म की ये मान्यतायें वैष्णव मान्यताओं से मिलती जुलती हैं।

सिक्ख का जीवन परोपकार का जीवन है इसलिये वह कभी भी किसी का भी अहित नहीं करेगा, दूसरे के लिये कष्ट सहेगा, किन्तु दूसरों को कष्ट नहीं देगा। सिक्ख की मान्यता है कि एक ही सिक्ख में चारों वर्ण सम्मिलित हैं जैसे भजन करने से, विद्वान होने से सिक्ख ब्राह्मण रूप है, शस्त्रधारी होने से सिक्ख क्षत्रिय हैं, व्यापार और खेती किसानी करने वाला सिक्ख वैश्व रूप है तथा सेवा करने वाला सिक्ख शूद्र हो जाता है। सेवा ही सिक्ख धर्म में मुख्य माना जाता है और यही वैष्णव धर्म की भी मुख्य मान्यता है। इस प्रकार सिद्धान्तः वैष्णव धर्म और सिक्ख धर्म अप्रथक है। गुरूनानक देव ने चारों वर्णों को मतभेद न करते हुये समान रक्खा है।

क्षत्रिय, ब्राह्मण, सूद्र, वैस उपदेष चहुॅ वरना को सांझा।
गुरूमुख नाम जपे उधरे सो कलि में घट—घट नानक मांझा।।

सिक्ख धर्म का सिद्धान्त श्रीगुरूग्रन्थ साहिब से लिया जाता है। इसके कई भाश्य हैं जिनके कई विद्वान संतों ने बनाये हैं। गुरूगोविन्द सिंह जी ने खालसा पंथ की नींव डाली थी। किसी समय खालसा संकट में आ जावे तो पांच प्यारे गुरूग्रन्थ साहिब की हुजूरी में गुरूमत तैयार कर सकते हैं और आदेश देकर संकट से उबार सकते हैं। अकाल तख्त से जो हुकुमनामा जारी किया जाता है उसकी यही परंपरा है। यह एक लोकतांत्रिक प्रणाली प्रतीत होती है।

सिक्ख धर्म में अतिथि सेवा पर विशेष महत्व दिया जाता है। ईश्वर के नाम को ही सबसे बड़ा तीर्थ माना जाता है। इसलिये तीर्थ यात्रा पर विशेष बल नहीं दिया जाता है। सिक्ख धर्म में सेवा, सत्य, संतोष, दया, धर्म विचार को हृदय में धारण करना, मीठा बोलना, नम्रता से रहना —ये शुभ कर्म माने जाते हैं। पुनर्जन्म और चौरासी लाख योनियों पर विश्वास किया जाता है। सिक्ख धर्म में बैयालिस लाख योनियॉ जल पर और बैयालिस लाख योनियॉ थल पर मानी जाती हैं। सिक्ख धर्म कृत्रिमताओं के बंधन से मुक्त है। इस धर्म के भीतर भी सांप्रदायिकता ने समय—समय पर अनेक वर्गों की सृष्टि की है और कभी—कभी उनमें पारस्पिरक कलह भी होते रहते हैं। फिर भी शांति व अहिंसा के ऊपर प्रचारक गुरू नानक देव के पद चिन्हों पर चलने वाले सिक्ख धर्म द्वारा मानव समाज की भलाई का मार्ग खुला है।

इस प्रकार उपर्युक्त तथ्यों और विवरण से स्पष्ट है कि नानक का समाजदर्शन शासत्रीय पदों और परिभाषाओं में अभिव्यक्त न होने के बावजूद व्यावहारिक दृष्टि से उनके विचार, मूल्य एवं सिद्धान्त तत्कालीन समाज को आगे बढ़ाने में क्रांतिकारी भूमिका अदा की है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 हिन्दू समाज चार जातियों में विभक्त था— ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। मुसलमानों में चार श्रेणियॉ थीं परंतु ये श्रेणियॉ कर्म से संबंधित थी न कि जन्म से—(1). मलम के अधिकारी (2). तलवार के अधिकारी (3). व्यापारिक (4). श्रमिक। 2 सिंह, त्रिलोचन : **गुरूनानक जीवन, युग एवं शिक्षायें**, पृष्ठ 107 3वही, 4वही, 5वही पृष्ठ 108 6 मिश्र, जयराम : **श्रीगुरूग्रन्थ साहिब**, पृष्ठ 54 7वही, 8 वही पृष्ठ 55 9वही पृष्ठ 56